प्रथम अध्याय

जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रथम अध्याय

"जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व"

प्रस्तावना –

प्रत्येक साहित्यकार का कृतित्व उसके व्यक्तित्व से प्रभावित रहता है और उसका व्यक्तित्व अंश रूप में उसके द्वारा अभिव्यक्त होनेवाली क्रियाओं प्रतिक्रियाओं मे आभास पाता है। यदयपि व्यक्तित्व का अधिकांश भाग अव्यक्त रहते हुए भी साहित्यकार को प्रेरित करता है। तथापि उसका अभिव्यक्त किया गया व्यक्तित्व उस रचनाकार की रचनाओं को समझने और उनका सर्वांगीण अध्ययन करने में सहायक होता है। वस्तुत: व्यक्तित्व और कृतित्व का गहरा संबंध होता है। लेखक का व्यक्तित्व उसकी रचनाओं मे सर्वत्र व्याप्त रहता है।

1.1 व्यक्तित्व :–

लेखक का व्यक्तित्व उसके साहित्य में नजर आता है और व्यक्तित्व का निर्माण उसके सामाजिक, पारिवारिक, राजनीतिक और धार्मिक परिवेश में ही होता है। जिसके बीच रहकर वह बडा हुआ है। जीवन में घटित घटनाएँ साहित्य सृजन लिए प्रेरक होती है। इसके लिए जन्म, माता–पिता, परिवार, शिक्षा, विवाह, संतान, साहित्य सृजनारंभ, कृतित्व का परिचय आदि को विस्तार से जानना आवश्यक है। अंत: प्रसाद जी के समग्र व्यक्तित्व की जानकारी प्रस्तुत है।

1.1.1 जन्म :–

हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ साहित्यकार जयशंकर प्रसाद का जन्म माघ शुक्ल दशमी विक्रमीय संवत् १९४६ में काशी के माहेश्वर कुल में बहुप्रतिष्ठित एवं सुसंपन्न परिवार में हुआ था। प्रसाद जी के पिताजी का नाम शिव रतन साहु और माताजी का नाम देवी प्रसाद साहु था। उनके भ्राता का नाम श्री शंभुराम था।

1.1.2 परिवार :–

प्रसाद जी सुंघनी साहु नाम से विख्यात समृध्द परिवार में जन्मे थे। वह ऐश्वर्यवान पिता की प्रिय संतान होने के कारण परिवार में सब के आँखो के तारे थें। उनके पिताजी काशी के लब्ध प्रतिष्ठ नागरीक थे। पिताजी की उदारता और कलाप्रेम विख्यात था। प्रसादजी के पिता परम शैव भक्त थे। पुत्र प्राप्ति के लिए उन्होने शिवजी की कठोर आराधना की थी। शंकर के प्रसाद से कवि जयशंकर प्रसाद का जन्म हुआ था।

1.1.3 शिक्षा :–

प्रसाद को बचपन से ही लेखनी से खेलना अच्छा लगता था। उनकी साहित्यिक अभिरूची में नजर आता है। प्रसाद का बचपन वैभव पूर्ण वातावरण में व्यतीत हुआ। प्रसाद के पिता उदार–दानी थे। प्रसाद ने बचपन में विभिन्न रमणीय धार्मिक स्थलों की यात्रा की, जिसका प्रभाव उनके काव्य में नजर आता है। प्रसाद नौ वर्ष की आयु मे समस्या पूर्ति करने लगे थे।

प्रसाद की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई थी। विधिवत् शिक्षाभ्यास हेतू दस वर्ष की आयु में उन्हे काशी के स्थानीय क्वींस कालेज में भेजा गया। प्रसाद ने हिन्दी, संस्कृत, फारसी आदि भाषाओं का अध्ययन घर पर ही क्रिया। 'रस सिध्द' उनके प्रधान गुरू थे। क्वींस कालेज में शिक्षा प्राप्त करके भी दीन बन्धु ब्रम्हचारी से इन्होने संस्कृत का अध्ययन किया। परिवारिक समस्या के कारण नियमित शिक्षा पाने में असमर्थ रहें। माता–पिता और भाई के देहावसान से परिवार की जिम्मेदारी प्रसाद पर पड जाती है। सम्पत्ति कर्ज मे चली जाती है।

कालेज की पढाई होड कर प्रसाद ने घर पर ही शिक्षा प्रारंभ की सगे–संबंधियों से भी उन्हे अनेक प्रकार के कष्ट सहने पढते है।

1.1.4 विवाह :–

प्रसाद जी का विवाह बीस वर्ष की आयु में होता है। दस वर्ष बाद इनकी पत्नी का देहांत हो जाता है। भाभी के आग्रह के कारण प्रसाद को दुसरा विवाह करना पडता है। किन्तु किस्मत उनका साथ नही देता विवाह के एक वर्ष बाद उनकी दूसरी पत्नी दिवंगता हो जाती है। पुन: भाभी के आग्रह के कारण पाच वर्ष के बाद उनका तिसरा विवाह हो जाता है।

1.1.5 संतान :–

प्रसाद जी को उनकी तिसरी पत्नी से एक पूत्र की प्राप्ति हो जाती है। उनके पुत्र का नाम रत्नशंकर था। प्रसाद ने अपने पुत्र का नाम अग्रज की स्मृती मे उनके नाम को परिवार्तित कर रखा था।

1.1.6 साहित्यिक प्रेरणा :–

प्रसाद के पिता साहित्यिक रूचि के व्यक्ति थे। उनके घर पर कवि–गोष्टियों का आयोजन होता और प्रसाद बचपन से ही उनमें भाग लिया करते थें। भारत के भतीत का गहराई से अध्ययन किया था। भारतीय संस्कृति पर उन्हे गर्व था।

1.1.7 पठन–पाठन :–

प्रसाद जी में छोटी उम्र में ही पठन–पाठन की प्रवृत्ति आ गई थी। दीन बन्धु ब्रम्हचारी से संस्कृत का अध्ययन किया। वैदिक वाड्मय तथा भारतीय दर्शन का स्वाध्याय कर ज्ञानार्जन किया।

1.1.8 साहित्य सृजनारंभ :–

नौ वर्ष की आयु में प्रसाद समस्या पूर्ति करने लगे थे। प्रसाद ने नौ वर्ष की अल्प आयु में ही 'अमरकोश' तथा 'लघु सिध्दांत कौमुदी' कष्ठस्य कर ली थी। उन्होने गजलें भी लिखी थी। १५–१६ वर्ष की आयु से वह कहानी, नाटक और कविता लिखने लगे थें।

"जीवन के इन उतार–चढावों को धैयपूर्वक सहन करते हुए प्रसाद साहित्य साधना में रत रहे। वे अपने स्वास्थ के प्रति यदयपी पूर्णत: सजग रहते थे, परंतु जीवन के अंतिम प्रहर में वे रोगग्रस्त हो गये। सवंत् १९३३ में वे सर्व प्रथम बुखार से पीडित रहे और उन्हे उदरशूल हो गया। जाँच करने पर ज्ञात हुआ कि वे राजयक्ष्मा से पिडीत हैं। इसी रोग से उनकी पत्नी चल बस्री थी। अंत: प्रसाद इस रोग के भयंकर परिणामों से परिचित थें। शुभचिंतकों ने उन्हें पर्वतीय स्थान पर जाने का परामार्श दिया । किन्तु काशी छोडना उनके लिए असहय था। संवत् १९९४ मे चर्मरोग ने भी उन पर आक्रमण कर दिया और उनका शरीर जर्जर होने लगा। अंतिम दिनों मे वह पलंग पर ही पडे रहते थे। अत: कार्तिक शुक्ल एकादशी वि. स. १९४७ नवम्बर सन् १९३७ को अडतालीस वर्ष की आयु मे हिन्दी साहित्य का यह अमर कवि दिवंगत हो गया।" १

जयशंकर प्रसाद का कृतित्व :–

हिंदी साहित्य के प्रख्यात साहित्यकार जयशंकर प्रसाद जी का रचना संसार विस्तृत है। उन्होने काव्य, उपन्यास, कहानी, नाटक, आलोचना, निबंध, आदि विविध विधाओं मे लेखन कार्य किया है। अनका साहित्य सामाजिक और सांस्कृत परिवेश से जुडा है।

"प्रसाद जन्मजात कवि थे। उनकी साहित्यिक जीवन–यात्रा का आरंभ ब्रजभाषा की समस्या–पूर्तियों से हुआ। उनके प्रारंभिक जीवन की कविताओं मे अतीत की दु:खद स्मृतियां, हल्के विषाद का आवरण तथा श्रृंगार की अतृप्त भावनाओं का आभास मिलता है।" २

"बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न जयशंकर प्रसाद ने साहित्य सर्जन की एक लंबी यात्रा तय की है और हिन्दी साहित्य को उत्कृष्ट कोटि की रचनाओं से

---

१. मानसिंह आर. डोड़िया – " प्रसाद के नाटकों में चरित्र सृष्टि"–पृष्ठ क्र.२३
२. कैलाश नारायण अवस्थी – " प्रसाद साहित्य की समीक्षा" – पृष्ठ क्र. ११

गौरववन्तित किया है। उनकी उन्मेषशालिनी प्रतिभा ने नौ वर्ष की अल्पवय में ही सुंदर छंद की रचना कर डाली थी। घर मे होनेवाली साहित्यिक गोष्टियों ने प्रसाद के कोमल हृदय में साहित्य रचना का बीज – वपन कर दिया था। समस्या पूर्ति से प्रभावित हो उन्होने एक छंद की रचना कर गुरू और प्रसाद को महाकवि बनने का आशीर्वाद दिया। यही से उनके साहित्य – जीवन का शुंभारंभ हुआ और उन्होने पदय के साथ–साथ गदय के क्षेत्र मे भी साहित्य की रचना की। वे कवि एवं नाटकाकर पहले थे, गदयकार बाद में अत: सर्वप्रथम उनकी काव्य – (रचनाओं का) परिचय अपेक्षित है। उनकी प्रमुख कृतियां है. – चित्राधार (सन १९१८ ई) कानन कुसुम (सन १९३१ ई) झरना (सन १९८१ ई), आँसू (सन १९२३ ई) एवं 'कामायनी'। '' १

''प्रसाद के 'कानन – कुसुम', 'चित्राधार' 'झरना' मे इन्ही दबी हुई भावनाओं का रूप प्राप्त होता है। 'आँसू' में यह पक्ष उभर कर आया है लेकिन दार्शनिक समाधान के साथ इसमें श्रृंगार की असाधारण मार्मिकता तो है ही; किन्तु दार्शनिक – चिन्तन के सुन्दर संयोग ने कृति को महत्वपूर्ण बना दिया है। 'आसू' काव्य के बाद श्रृंगार का उव्देग उनके काव्य मे नही मिलता। पश्चात की कृतियों मे पष्किृत सौदर्य की भावधारा त्रिवेणी के रूप मे प्रवाहित होती दिखाई पडती है, वह 'कामायनी' में काव्य, दर्शन और आनन्द के महोदधि में समाहित होती है।

''प्रारंभिक (रचनाएँ) प्रसादने ब्रजभाषा मे लिखी किन्तु बाद मे खडीबोली को उन्होने अपनी काव्य रचना का माध्यम बनाया। 'आसू' उनकी प्रसिध्द रचनाओं मे से एक है। इस श्रेष्ठ विरहकाव्य में कवि की आत्माभिव्यक्ति है

---

१. मानसिंह आर.डोड़िया–''प्रसाद के नाटकों मे चरित्र''–सृष्टी –पृष्ठ क्र.– २४

जिसमें मानव हृदय की आकांक्षाओं का चित्रण हुआ है। असीम वेदना से आप्लावित यह कृति विरह जन्य पीडा, दु:ख टीस एवं कसक को साकार करती हुई प्रेमानुभूति की तीव्रता को अभिव्यक्त करती है। 'कामायनी' प्रसाद जी की प्रौढतम कृति है जिसमे हृदय तथा बुध्दि, इतिहास तथा कल्पना एवं साहित्य तथा दर्शन का अपूर्व समन्वय हुँआ है। पौराणिक ग्रंथो काा आधार लेकर कवि ने मानवीय चेतना के विकास की दस कथा में प्रतीकात्मक पात्रयोजना द्वारा मानव जीवन की समस्त वृत्तियों का प्रकाशन करते हुए अंत में आनंदवाद की प्रत्ष्ठिा की है। प्रकृति का सजीव – चित्रण, सौदर्यानुभूति, नारी के प्रति नवीन दृष्टिकोन, आध्यात्मिक एवं दार्शनिक सूत्रों का संयोजन आदि प्रसाद के कव्या संसार की उल्लेखनीय विशेषताएँ है।'' १

गदय साहित्य के क्षेत्र में प्रसाद ने नाटकों, कहानियों एवं उपन्यासों की रचना की है।

1.2.1 कहनीकार के रूप में प्रसाद :–

कहानीकार के रूप में प्रसाद एक श्रेष्ठ कहानीकार है। प्रसाद की कहानियाँ श्रेष्ठ और उच्चकोटि की कहानियाँ मानी जाती है। प्रसाद ने कुल पाँच कहानी संग्रह लिखे है। सभी कहानियाँ उद्देश पूर्ण है।

'' हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ कहानीकारों मे प्रसाद का अपना विशिष्ट स्थान है। उनकी कहानी – कला का विकास सर्वधा निजी रचना तंत्र के आधर पर प्राय: मौलिक शैली में हुआ है। इस नए रचना–विधान का भावसौष्ठव अपना विशिष्ट मूल्य रखता है। इतिहास के सदंर्भ में समाज की वस्तु–स्थिती का सतर्क अवलोकन तथा काव्य सुलभ भावुकता के साथ कवि का निगूढ़ जीवन – दर्शन इन कहानियों में सरल, स्वाभाविक तथा प्रेषणीय रूप से प्रस्फुटित हुआ है। 'प्रसाद' की कहानियों का उद्गम परिष्कृत भावनाओं के स्त्रोत से हुआ है। काव्यात्मक भाव – पक्ष ने इस रचनातंत्र को महत्व दिया है। इसका

---

१ मानसिंह आर. डोड़िया– ''प्रसाद के नाटकों मे चरित्र सृष्टी'' – पृष्ठ क्र. २५

रूपात्मक भाव रहस्यवादी धारणा से प्रेरित है। प्रस्तुत कहानियाँ प्राय: विचार बिन्दु से अंकुरित हुई है और रहस्य – दर्शन को जीवन के विविध आयामो की परिधि में समेटकर उन्हे जीवन्त करती रही हैं। ऐतिहासिक काहानियों के भीतर लेखक की नाटय प्रेरणा विदयमान है, जो सामूहिक प्रभाव के कारण अधिक संवेदनीय बन गई है। 'प्रसाद' की कहानियों की सृष्टि और उसका उद्‌गम काव्य और नाटक की परिष्कृत भावनाओं मे हुआ है। '' १

'कल्पना–वृत्ति 'प्रसाद' के समस्त रूपो का मूल स्त्रोत है। इसी स्तर पर भावपक्ष तथा शैली पक्ष का संगम हुआ है। कल्पना के आधार पर अनेक आदर्श तत्व, साथ ही दर्शन एवं अतीत का संयोग लेखक को अभीष्ट है। 'प्रसाद' की कला समन्वयात्मक धरातल पर स्थित है। प्रस्तुत कहानियाँ यदयपि भावुकत की अतिशयता के कारण सामान्य शिल्पविधि से कुछ दूर हैं, फिर भी कल्पना वैदग्ध्य के सहारे वे काव्य बिन्दु पर केन्द्रित हैं। यथार्थपूर्ण भौतिक समस्याएँ यहाँ न्यून हैं, क्योंकि प्राय: इन कहानियों का विषय है – भावूक उत्तेजना, सौदर्य की प्रेरणा, काव्योद्‌गारों की अन्तस्चेतना तथा प्रकृति का रमणीय चित्रण अतीत संस्कृति के आधार पर लेखक पुनरूत्यान का संकल्प भी प्रकट करता है और साथ ही रेखा–चित्र की कला का आभास देता हुआ गदयगीत का स्वरूप भी अंकित करता है। पात्रों के कवित्वपूर्ण संवाद, आलंकारिता और काव्यात्मकता के प्रत्यक्ष प्रमाणे यहाँ सुरक्षित हैं। प्रेम–सौंदर्य एवं करूणा का रहस्य, साथ ही सामाजिक कुरूपता पर निर्मम व्यंग्य, उसकी उत्कृष्ट कला का साक्ष्य प्रस्तुत करता है, 'प्रसाद' के कलात्मक स्तर पर जागरूक भावत्मकता से युक्त नया दुष्टीकोण प्राप्त होता है, जो उत्कृष्टता का परिचायक है और जीवन की परिपूर्णता का बोधक भी इसप्रकार हिंदी कहानी के विकास में 'प्रसाद' और 'प्रेमचंद' का विशेष योग रहा है।'' २

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ८३
२. वही – पृष्ठ क्र. ८३

''प्रसाद की कहानियों का सबसे प्रधान लक्ष्य है– आदर्श की प्रतिष्ठा; जो समाज, दर्शन और व्यक्ति तीनो क्षेत्रो में व्यंजित हुई है। उन्होने यथार्थ और आदर्श का अन्तर्समन्वय किया है। पुरातन – मर्यादा का समर्थन करता हुआ भी लेखक नवीन युग का जागरण सन्देश प्रसारित करता है। वर्तमान की सामाजिक मान्यताओं के प्रति क्रांती और अन्ततः एक उदार प्रगतिशील दृष्टीकोण प्रकट करके 'प्रसाद' ने जहाँ पुरातन प्रेम का स्वीकार किया है, वही वर्तमान के लिए महान, चिरंतन आदर्श स्थापित करके युग का शुभ सकल्प व्यक्त किया है।'' १

'' 'प्रसाद' राग, रसपूर्ण एक महान सौन्दर्योपजीवी कथाकार हैं। उनका रागतत्व स्वस्थ प्राकृतिक प्रेरणा पर केन्द्रित है, जो स्वतः एक स्वर्गिक आकर्षण है, वासना, विकास एवं ऐहिक स्थूल स्वरूपों के साधार पर प्रणय और परिणय के ये चित्र लेखक की प्रशांत मधुचर्या और तत्वचिंतन के साक्ष्य हैं। वे प्रेम एवं सौन्दर्य के क्षेत्र में सशक्त सामाजिक आन्दोलन प्रस्तुत करते हैं। समाज के क्षेत्र मे 'प्रसाद' का आदर्शवाद प्रेम और विवाह के दोन केन्द्र – बिन्दुओ में प्रतिष्ठित है। वैदिक शैव एवं बौध्द दर्शन उनके आदर्शवाद की चिन्तन–धारा में प्रेरणा के बिन्दु हैं। उनकी नारियाँ आदर्श की प्रतिमाएँ हैं, जो सक्रिय जीवन में नैसर्गिक भावनाओं की अनुभूति लेकर आती हैं।'' २

'' संवेदना की सृष्टी 'प्रसाद' की कहानियों में सफल रूप से हुई है। आरंभिक वर्णनों पात्रो के कथोपकथनों और प्रतिपादय वस्तु–विषय द्वारा लेखक करूणा और घनीभूत वेदना का वातावरण उपस्थित कर देने मे सक्षम हुआ है। वातावरण के निर्माण में 'प्रसाद' ने विशेष रूप से वर्णन प्रणाली, दुश्य–विधान एवं भावचित्रों का माध्यम ग्रहण किया है। स्पष्ट है कि भाव और कला दोनो

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ८३
२. वही – पृष्ठ क्र. ८५

पक्षों में वे अभिनव हैं – ''प्रसाद की मौलिकता कहानी के भाव – पक्ष में ही सीमित न रहकर कहानी के कलापक्ष में विशेष रूप से अपनी प्रेरणा दे रही थी।'' १

'' 'प्रसाद' की अधिकांश कहानियों की यही विशेषता है कि उनमे वातावरण की यही विशेषता है कि उनमें वातारण की साक्षात सृष्टी हुई है और अतीत का अंश मूर्तिमान हो उठा है। व्यक्तिगत चरित्र के सारे राग – विराग, घात – प्रतिघात एवं अन्तर्व्दन्व्द की अभिव्यक्ति लेखक की समर्थ चित्रण – शक्ति के द्वारा अत्यंत भाव – प्रवणता के साथ हुई है। इस वर्ण्य – विषय का चित्रण अत्यधिक सांकेतिक है और सम्पूर्ण रूप से उसमे गदय काव्य का आनन्द प्राप्त होता है। लेखक ने संकलनत्रय का सफल निर्वाह करके उसे और भी कलावंत बना दिया है। इस प्रयोजन के लिए 'प्रसाद' की भाषा बंहुत सहायक है। वे भाषा के क्षेत्र मे शुध्दतावादी हैं। उनकी व्यवहृत भाषा संस्कृतनिष्ठ तथा आलंकारिक है, जिसमें पर्याप्त व्यावहारिकता भी है और कवित्व का उन्मेष भी। यथा प्रसंग देशज और ग्रामीण शब्दों से भी इनकी कहानियाँ सुसज्जित हैं।'' २

प्रसाद का कहानी साहित्य पाँच संग्रहो के रूप में उपलब्ध है। जिनमे कुल सत्तर कहानियाँ हैं। प्रसादजी के कहानी संग्रह निम्मलिखीत है –

१) छाया (१९१२ ई.)

२) प्रतिध्वनी (१९२६ ई.)

३) आकाशदीप (१९२६ ई.)

४) आँधी (१९२९ ई.)

५) इंद्रजाल (१९३६ ई.)

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ८५

२. वही – पृष्ठ क्र. ८५

1.2.2 उपन्यासकार के रूप में प्रसाद :–

प्रसाद ने कहानी के साथ–साथ उपन्यास में भी अपना योगदान दिया है। प्रसाद के उपन्यास हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण है। प्रसाद के तीन उपन्यास है– 'कंकाल', 'तितली', 'इरावती'।

''हिन्दी उपन्यासों के क्षेत्र में 'प्रसाद' के कृतित्व का अपना निजी वैशिष्टय् है। इस विधा में सौन्दर्योपजीवी एवं स्वच्छन्दतावादी कवि का सामाजिक रूप प्रकट हुआ है। 'प्रसाद' की समस्त औपन्यासिक कृतियाँ उनकी जीवन दृष्टी, उसकी लोक–संग्रही वृत्ति और उनकी युग–विश्लेषण शक्ति का परिचय देती हैं। इनमें वैयक्तिक जीवन के चित्रण की प्रमुखता है, अत: इन्हे हम व्यक्तिवादी उनन्यास कह सकते है; पर ये व्यक्ति किसी समुदाय विशेष के प्रतिनिधी हैं, जिनके सहज विश्वास और जिनकी गतिविधि उस समूह का दिग्दर्शन कराने में समर्थ है। व्यक्तिवाद के साथ ही प्रस्तुत कृतियों में लेखक की सामाजिक चेतना भी प्रचूर मात्रा में परिलक्षित हुई है। उस वास्तविक स्थिती का उद्घाटन करके उसने व्यक्तिवादी चिन्तन की प्रतिष्ठा बढ़ाई है। यहाँ वैयक्तिक जीवन का चित्रण बढ़ाई भी मनोवैज्ञानिक आधार पर हुआ है। यह वैयक्तिक चेतना की अभिव्यक्ति अन्तर्मुखी एवं आत्म केंन्द्रित है, किन्तु सामाजिक चेतना, मध्यवर्गीय सामाजिक चेतना और सर्वागीण व्यक्ती के भाव – दोनों पूर्णत: मुखरित हुए हैं। पात्र वर्गवत प्रतिनिधि भी हैं, पर अपने व्यक्तिगत विचार भी रखते हैं। उन पात्रों का चरित्रांकन अधिक विशद रूप में किया गया है, जिनके मनोबल में वैयक्तिक स्वातंत्र है। सामाजिक बन्धन के बीच व्यक्ति की प्रबल आकांक्षाओं की परीक्षा प्रस्तुत करके 'प्रसाद' ने यहाँ समग्र द्वन्व्दात्मक दृष्टि का परिचय दिया है। यहाँ वे रोमैन्टिक आदर्शवादी कोटी से परे घोर यथार्थवादी हैं।'' १

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ८७

उपन्यास तथ्थपूर्ण सामाजिकता का सहज एवं सजीव माध्यम है। लेखक धार्मिक और सामान्य व्यवहारिक विषमताओं की स्थिती से पलायन नहीं कर सका है। उन गुत्थियों में उसे सुलझना पड़ा है और अन्तर्मुखी सामनधान भी प्रस्तुत करना पडा है। बहिर्जीवन सम्बन्धी उनकी अनुभूती कुछ कटु और तीखी हो गई है। उन्होने निर्भय हाकर अनेक सामाजिक संस्थाओं का खोखलापन दिखाया है। उस वास्तविक स्थिती के उद्‌घाटन में सामाजिक विषमता का नग्न स्वरूप प्रकट किया गया है। प्रेम–सौन्दर्य के स्वच्छन्द प्रवाह और दो मानवीय हृदयों के मधुर मिलन की रसमय गाथा भी इन कृतियों में विदयमान है। 'प्रसाद' का दृष्टीकोण सामाजिक परिष्कार में सहायक हुआ है। वह कहीं भी अमर्यादित नहीं है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी जी के मतानुसार ''उपन्यास का लक्ष्य मुझे अनैतिक नहीं जान पड़ा, बल्कि सामाजिक परिष्कार में सहायक ही हुआ है। 'प्रसाद' का उपन्यास साहित्य रचना–तंत्र की दृष्टि से पूर्ण है। काव्य और नाटकों की भांति 'प्रसाद' उपन्यास रचनाओं में अधिक तल्लीन नहीं हुए हैं, क्योंकि गदय की यह विधा आयास की दृष्टी से सरल होते हुए भी अधिक ललित नहीं है। वे अपनी विचार वेदना से व्यथित होकर ही इस विधा मे प्रवृत्त हुए हैं। जिस समस्या में रसमय कवित्व की सम्भावना कम थी अथवा जिसमें नाटकीयता या प्रबन्धात्मकत न्यून थी और औपन्यासकिता के लक्षण अधिक थें, उसका ही 'प्रसाद' ने कथा–कृतियों में सन्निवेश किया है। 'प्रसाद' के उपन्यास 'कंकाल', 'तितली' और 'इरावती' इस कथन का प्रमाण हैं।'' १

1) <u>कंकाल</u> :–

''प्रसाद की औपन्यासिक कृतियों मे 'कंकाल' उनका प्रथम उपन्यास है। जो उनकी परिवार्तित सामाजिक दृष्टि और युग – दर्शन का आभास देता है। इसे प्रथम बार आचार्य वाजपेयी जी ने 'यथार्थवादी', उपन्यास कहा है। कृति में समाज की निर्बलता और सार्वजनिक हेयता का

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ५५

पर्दाफाश हुआ है। 'कंकाल' मे आदयन्त किसी भी पात्र की नैतिकता का निर्वाह नहीं हो सका है। प्रत्येक चरित्र अपने अन्तरम में शिथिल है। प्रत्येक पात्र वर्ण संकर और पाप–सन्तान है, प्रत्येक सुधारक विपथगामी है। समाज का ऐसा जीवित कंकाल साहित्य में अब तक उपलब्ध नहीं था। यह ऐसी विचार प्रधान कृति है, जहाँ सर्वत्र अभिजात्य पर शंका प्रकट की गई है। प्रत्येक आदर्श की अग्निपरीक्षा ली गई है। ऐसी त्रस्त मानवता का दर्शन व्यक्ति को आपाद–मस्तक झकझोर देता है और मन में इस प्रकार का आक्रोश उत्पन्न करता है कि समस्त सामाजिक रूप–रचना के प्रति तीव्र अनास्था उत्पन्न हो जाती है। कंकाल 'प्रसाद' की तीव्र अनुभूति और सूक्ष्म निरीक्षण – शक्ति का प्रतीक है।'' १

'' 'कंकाल' यह प्रसाद की बुध्दिवादी प्रेरणा है। बुध्दिवादी विजय का 'कंकाल' समाज की रूढ़ और निस्सार मान्यताओं के भार से दबे हुए व्यक्ति चेतना के अनेक शवों का प्रतीत हैं। इस कारण ही इसमें प्रथम बार यथार्थवादी प्रवृत्ति मिलती है। हिन्दू समाज का यह नग्न खोखलापन प्रस्तुत करने और उसका दिग्दर्शन कराने का साहस अभी तक किसी को इस दिशा में प्रेरित नहीं कर सका था। इस दृष्टि से 'प्रसाद' का साहस सराहनीय है। 'कंकाल' मे समाज की यथार्थवादी तथा निर्मम विकृति द्रष्टव्य है। बाल–वैधव्य, संतान लालसा, धर्म के दुश्चरित्र ठेकेदार, वेश्यावृत्ति और स्त्री–पुरूष सम्बंन्ध की मूल प्रेरणाएँ यहाँ उभरी गई हैं। 'कंकाल' मे 'प्रसाद' का शिव–पक्ष अन्तस में परिष्कार और विशुध्दीकरण की क्रांतिकारी भावना है।''२

2) <u>तितली</u> :–

'' 'तितली' 'प्रसाद' की औपन्यासिक कलाकारिता का दूसरा सोपान है। जिसमें मुर्तिमान नारित्व, आदर्श भारतीय पत्नित्व या सतित्व जागृत

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ५६
२. वही – पृष्ठ क्र ५८

हुआ है। कथा संयोजन में अतिशय भावूकत है और उसी के आधार पर ही स्निग्ध और मधूर दाम्पत्य संबंध का निर्देशन हुआ है। 'तितली' लेखक के विधेयात्मक दृष्टिकोण की देन है। यह उनकी निर्माण – शक्ति का साक्ष्य है। जीवन के सामान्य धरातल पर इस कृति का संगठन हुआ है। यदयपि इन दोनों कृतियों में यथार्थवादी प्रवृत्ति है, किन्तु 'तितली' का यथार्थ आदशोन्मुख है, क्योंकि उसका निष्कर्ष ध्वंस की ओर न जाकर सृजन की राह पर मुड़ गया है। सामाजिक व्यंग्य की यहाँ वक्र दृष्टी नहीं है। समाज के प्रति यहाँ सहानुभूती है। 'तितली' में साधारण शक्ति सम्पन्न लौकिक पात्र हैं, जिनकी गतिविधि सामान्य है। सामन्तवादी पध्दती का समर्थ विरोध, कृषक जीवन के प्रति सहानुभूति और श्रम की महत्ता, इस गरिमामयी कृति में मुखरित है।''१

'' जीवन की कटु अनुभूतियाँ, सौहार्द और स्नेह की छिन्नता, वैयक्तिक चेतना का वैषम्य नारी की अनिश्चित आर्थिक पराधीनता, उनकी सच्ची आत्म–प्रतीति है। 'प्रसाद' के अनुसार सामाजिक दुर्दशा के कारणों में मुख्य है– संग्रह की भीषण – प्रवृत्ति। इसके कारण ही क्षुद्र स्वार्थों की होड़ निरन्तर लगी रहती है। इन समस्याओं से सम्बन्धित समाधान प्रस्तुत करने में 'प्रसाद' का सर्जनात्मक रूप अत्यन्त सजग दिखाई पडता है। वस्तुत:– इस अपरिमित और असाध्य समस्या को उन्होने उपन्यासों के परिमित आकार में नाटकीय ढ़ंग से रखने का प्रयास किया है।''२

3) <u>इरावती</u> :–

'इरावती' प्रसाद का आखरी उपन्यास है। प्रसाद ने कुल – मिलाकर तीन उपन्यास लिखे जिसमें पहला है। – 'कंकाल', दुसरा है – 'तितली' और

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ५८
२. वही – पृष्ठ क्र. ५९

तिसरा उपन्यास है – 'इरावती'। 'इरावती' इस उपन्यास में प्रसाद ने दिखाया है की, "प्रतिभा की सहज क्रीडा–भूमि तो भारत का स्वर्णिम इतिहास था। वर्तमान सामाजिक गुत्थियों को सुलझाते हुए वे कुछ अनमने हुए कि अतीत ने उनका पुन: आवाहन किया "इरावती" 'प्रसाद' की ऐतिहासिक कृति है। जिसमें दर्शन और कल्पना के संश्लिष्ट चित्र भास्वर हुए हैं। अनात्मवादी बौध्द – दर्शन पर प्रवृत्ति – मूलक आनन्दवाद की विजय – घोषणा इस कृति का प्रतिपादय है। अपुर्णता के कारण इस अनन्य कृति का अन्तिम निष्कर्ष अंसदिग्ध रूप से नहीं घोषित किया जा सकता, किन्तु 'प्रसाद' की वैचारिक गति–विधि और कथा–प्रवाह के सम्भावित कथा सूत्रों के आधार पर इसका निष्कर्ष सिध्द किया जा सकता है। अपने सीमित कलेवर में "इरावती" निस:सन्देह एक गौरव ग्रन्थ के बीज विदयामान है।"[१]

1.2.3 निबंधकार के रूप में प्रसाद :–

प्रसाद ने कहानी, उपन्यास, नाटक के साथ–साथ निबंध साहित्य मे भी अपना योगदान दिया है। हिंदी साहित्य में प्रसाद के निबंध महत्वपूर्ण माने जाते है। " 'प्रसाद' के निबन्ध यदयपि साहित्य और समाज की विविध समस्याओं को लक्ष्य करके लिखे गए हैं तथापि विषय वस्तु की दृष्टि से उनमें एकनिष्ठता है। 'प्रसाद' के कुछ आरम्भिक निबन्ध स्फुट रूप से "चित्राधार" में संकलित हैं, किन्तु उनमें लेखक की निबन्ध – लेखन की प्रतिभा अपने प्रौढ़ रूप से अभिव्यक्त नहीं हुई है। निबन्ध कला का उत्कृष्ट उदाहरण है उनका निबन्ध संग्रह –'काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध' इसमें संकलित शीर्षको को लेखक ने निबन्धों की कोटि में रखा है पर विशुध्द निबंन्ध की सीमा में इन्हे स्वीकृत करना उचित प्रतीत नहीं होता। साधारणत: इन्हें शास्त्रीय या समीक्षात्मक निबंन्ध कहा जा सकता है। इन साहित्यिक निबंध के गंभीर चिन्तन

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – " प्रसाद का गदय" – पृष्ठ क्र. ५९

और शास्त्रीय विवेचन की प्रचुरता के कारण इन्हें पृथक् रूप से काव्यशास्त्रीय निबन्धों की कोटि में रखना पड़ता है। विषय – सामग्री की दृष्टि से ये निबंध समालोचनाशास्त्र के अधिक निकट हैं।''१

प्रसाद के प्रमुख निबन्ध है –

1) आरम्भिक निबन्ध (चित्राधार)
2) विभिन्न स्फुट निबन्ध
3) प्राक्कथन एवं सम्पादकिय
4) काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध

1) <u>आरम्भिक निबन्ध (चित्राधार)</u> :–

'' प्रस्तुत निबन्धों को हम ललित निबन्धो की श्रेणी में रख सकते है। 'प्रसाद' की कुछ ऐसी आरम्भिक निबन्ध रचनाएँ भी हैं जो स्फुट रूप अवलोकनीय हैं। इनमें 'इन्दु' की सम्पादकीय टिप्पणियाँ, पुस्तकों की भूमिकाएँ और अपनी वे सम्मतियां जो उनके दृष्टिकोण को न्यूनाधिक मात्रा में स्पष्ट कर सकने में सक्षम हैं। प्रारम्भिक प्रयास के रूप में उनकी कुछ रचनाएँ 'चित्रधार' में संकलित हैं, जो लेखक की अभ्युदयकालीन कृति–शक्ति का आभास देती हैं। 'चित्राधार' के निबंध प्रकृति सौन्दर्य, 'सरोज' और 'भक्ति' शीर्षक निबन्ध क्रमश: विचारणीय हैं।'' २

2) <u>विभिन्न स्फुट निबंध</u> :–

''स्फुट निबन्धों में 'प्रसाद' का निबन्ध 'आर्यावर्त और उसका प्रथम सम्राट' विशेष ध्यातव्य है। इसमें लेखक ने देवाधिराज इन्द्र के स्वरूप का प्रामाणिक विवेचन किया है। वैदिक साहित्य के साक्ष्य पर जनमुतियों मे प्रचलित इन्द्र का स्वरूप यहाँ तात्विक मीमांसा के आधार पर निर्धारित किया गया है, अस्तु वह अपने में स्वत: प्रामाणिक इतिहास बन गया है। लेखक की बौध्दिकता एवं उसका बहु अधीत अन्तर्मन्थन यहाँ अति पर है, जो

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. १०५
२. वही – पृष्ठ क्र. १०६

प्रतिपादय की दृष्टि से तो पूर्ण है पर निबन्ध के लालित्यपूर्ण शिल्प के विचार से अधिक समीचीन नहीं है।'' १

3) <u>प्राक्कथन एवं सम्पादकीय</u> :–

'' पुस्तकों के प्राक्कथनों के रूप में 'प्रसाद' ने जो कुछ लिखा है, उनमें भी निबन्ध – कला के अनेक तत्व खोजे जा सकते हैं, यदयपि उन्हें पूर्ण निबन्ध नहीं कहा जा सकता है। ये प्राक्कथन अत्यन्त परिचयात्मक, व्याख्यात्मक और आत्मालोचन की प्रणाली से परिपूर्ण है। ऐतिहासिक नाटकों की कथावस्तु का प्रतिपादन करते हुए 'प्रसाद' ने यहाँ मुलभूत प्रेरक तत्वों एवं सूत्रो को इंगित किया है।''२

4) <u>काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध</u> :–

'' 'प्रसाद' की अन्तिम और अन्यतम निबंध रचना के रूप में 'काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध' कृति विचारणीय है। निबंध की संज्ञा पाकर भी ये रचनाएँ शास्त्र और सिध्दांन्त की कोटि में चली जाती हैं। शास्त्रीय वस्तु को 'प्रसाद' ने यहाँ इतिहास, दर्शन और मानव–मनोविज्ञान में संकलित करके अधिक प्रस्फूर्त कर दिया है।'' ३

1.2.4 <u>प्रसाद का आलोचना साहित्य</u> :–

प्रसाद ने नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध के साथ–साथ आलेचना साहित्य में भी अपना योगदान दिया है। प्रसाद का आलोचना साहित्य हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण माना जाता है। ''प्रसाद' ने काव्यशास्त्र के अनेक परंपरागत सिध्दांन्तो की मुलभूत अन्तर्दृष्टि का मौलिक विवेचन किया है। काव्य – सिध्दान्तों के प्रति सहृदयतापूर्ण दृष्टिकोण अपनाकर उसे प्रामाणिक स्तर पर उपस्थित करने का श्रेय छायावादी कवियों में 'प्रसाद' को सर्वाधिक है।''४

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. १०७
२. वही – पृष्ठ क्र. १०८
३. वही – पृष्ठ क्र. १०९
४. वही – पृष्ठ क्र. १११

आचार्य वाजपेयी की घोषणा के अनुसार – ''शास्त्रीय वस्तु को इन्होने इतिहास और मानव – मनोविज्ञान के दोहरे छन्नों से छानकर संग्रह किया है। इस छनी हुई वस्तु को अशुध्द या अप्रमाणिक कहने के लिए साहस चाहिए।''१ ''प्रस्तुत निबंन्धो के कुछ विशिष्ट विषय हैं, जहाँ 'प्रसाद' अपनी अभिनव मान्यताए स्थापित करते हैं और तर्कसिध्द प्रणाली से उन्हें प्रतिपादित करते हैं। वस्तुत: काव्यकला और नाटक के सम्बन्ध में प्रसाद के कुछ मौलिक विचार थें, जिनका विकास भारतीय परम्परा के अनुकूल हुआ था। समालोचना का यह मापदण्ड लेकर उन्होंने साहित्यशास्त्र को व्यापक दृष्टि दी है और व्दिवेदी – युग से कहीं अधिक संयत तथा संतुलित विचार – पक्ष प्रस्तुत किया है।''२

1.2.5 नाटककार के रूप में प्रसाद :–

हिंदी साहित्य में प्रसाद के नाटक महत्वपूर्ण है। साहित्य में इस विधा का सर्वोपरि स्थान है। प्रसाद ने कूल – मिलाकर ग्यारह नाटक लिखे है। प्रसाद के सभी नाटक हिंदी साहित्य में उच्चकोटि के माने जाते है। आचार्य वाजपेयी जी के शब्दों मे ''उन्होंने नाटय् क्षेत्र में प्रवेशकर नाटक को नए चरित्र, नई घटनाएँ, नया ऐतिहासिक देशकाल, नया आलाप–संलाप, संक्षेप में सम्पूर्ण नया समारंम्भ दिया।'' ३ '' 'प्रसाद' की सांस्कृतिक चेतना एवं रोमाण्टिक कल्पना हिन्दी की महान उपलब्धि है। उनमें आर्य संस्कृति के प्रति अटुट श्रध्दा है, अत: भारतीय पुराख्यान और वैदिक वाग्विभूति आदयान्त उनका कष्ठहार बनी रही। इस संस्कृति का सौन्दर्य गूढ़चिन्तन और रंगीन कल्पना के माध्यम से प्रकट हुआ है। अतीत उनकी कर्मभूमि है जिस पर पुनरूत्थानवादी दृष्टि पड़ी है। उन्होने अपनी गम्भीर जिज्ञासा और पुरातत्व – ज्ञान के सहारे, उसकी –

१. आचार्य नंददुलारे वायपेयी–प्राक्कथन, काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध – पृ. क्र. ५
२. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. १११
३. आचार्य पं. नंददुलारे वाजपेयी – आधुनिक साहित्य – पृ. क्र. ३९

विश्वस्त व्याख्या प्रस्तुत की और साथ ही उसमें एक मूतन प्राण–शक्ति का भी संचार किया। नाटकों के सम्पूर्ण वातावरण में आर्य – संस्कृति की छाया है और उस पर ऐतिहासिक राष्ट्रभक्ति का रूप आँका गया है। सीमित प्रान्तीयता अथवा संकुचित राष्ट्रीयता के स्तर से उठकर समस्त आर्यावर्त का गौरव – गान 'प्रसाद' का उद्दिष्ट रहा है। इस राष्ट्रीय आन्दोलन से उज्ज्वल अतीत पुनर्जीवित हो उठा है। नाटकों के सूद से जीवन व्यापी समस्याओं का अवगाहन 'प्रसाद' का ध्येय रहा है।''१

'' धार्मिक एवं जातीय दम्भ, साम्प्रदायिक संघर्ष, वैचरिक असामंजस्य, पारिवारिक कलह, दाम्पत्य जीवन, राजनैतिक अव्यसस्था, शासकीय प्रमाद, व्यक्ति चेतना में आनन्द एवं करूणा का समन्वय आदि प्रश्नों का उपस्थापन करके उन्होने अपनी सर्वागीण प्रतिभा और वैचारिक उदारता का परिचय दिया है। इन नाटकों मे श्रृंगार और शौर्य की प्रगाढ़ भावना से रूप यौवन के चटकीले रंग भली भांति उभरे हैं। उनके चरित्र प्रधान नाटक प्राय: अन्तर्व्दन्व्द और आत्मगौरव की भावाना से प्रणोदित हैं। प्रत्येक पात्र का व्यक्तित्व गतिशील है, साथ ही उसके चित्रण पर 'प्रसाद' के दर्शन एवं कवित्व की अमिट छाप है। काव्य की बहुरंगी छाया सर्वत्र स्पन्दित होती है, जिससे प्रत्येक घटना स्वयं ही एक मूक व्यथा बना जाती है। इसके साथ ही काव्य ग्रह से सरस भाषा, वेदना की अव्यक्त कसक समेटे हुए सुसंवेदय तथा भावुकताजन्य गदयगीत की सृष्टी हुई है। इन्ही विशेषताओं के कारण वे इस क्षेत्र में विशिष्ट स्थान के अधिकारी हैं। निश्चय ही – उनकी सांस्कृतिक पुनरूत्थान की चेतना, उनके महान कोमल चरित्र, उनके विराट मधुर दृश्य और अनका काव्यस्पर्श हिन्दी में अद्‌वितीय है। हिन्दी नाटकों की अपरिपक्व स्थिती में प्रसाद जी का प्रौढ़ शिल्प एवं विशिष्ट रचनातंत्र ऐतिहासिक महत्व रखता है।'' २

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. ११
२. वही पृष्ठ क्र. १२

उनके प्रमुख नाटकों में –

1)	सज्जन	(1910 ई.)
2)	करूणालय	(1913 ई.)
3)	प्रायश्चित	(1915 ई.)
4)	राजश्री	(1918 ई.)
5)	विशाखा	(1921 ई.)
6)	अजातशत्रु	(1922 ई.)
7)	जनमेजय का नागयज्ञ	(1923 ई.)
8)	कामना	(1927 ई.)
9)	स्कंदगुप्त	(1928 ई.)
10)	चंद्रगुप्त	(1931 ई.)
11)	ध्रुवस्वामिनी	(1934 ई.)

के नाम उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त प्रसाद जी का एकमात्र एकांकी –

1) एक घूँट
2) चंपूकाव्य
3) उर्वशी
4) कतिपय

निबंध भी मिलते हैं।

इस प्रकार प्रसाद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व दोनों मे आभिजात्य मनोवृत्ति में पर्याप्त पार्थक्य है और वे अपने क्षेत्र में अजेय और अमर हैं।

प्रसाद के नाटकों का संक्षिप्त परिचय है –

1) <u>"सज्जन" (1910 ई.)</u>

" 'सज्जन' में प्रख्यात महाभारत की अज्ञातवास सम्बन्धी घटना है। इसे जून १९११ के 'इन्दु' में प्रकाशित किया गया था और अब यह 'चित्राधार' में संकलित है। कौरवों की शत्रुता के प्रतिरूप पाण्डवों द्वारा शत्रु–संकट पड़ने पर भ्रातृप्रेम का प्रदर्शन इस लघुरूपक का वर्ण्य विषय है। प्रारम्भ में सूत्रधार, नटी, मंगलाचरण और प्रस्तावना आदि परम्परा के प्रभाव से प्रयुक्त हैं। सूत्रधार को 'सज्जनता सूझती' है अत: 'सज्जन' नाटक का अभिनय होता है। इसप्रकार की उक्तियाँ अधिक आई हैं।"[१]

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – " प्रसाद का गदय" – पृष्ठ क्र. १३

२) **"करूणालय" (1913 ई.)**

" 'करूणालय' प्रसाद का एकमात्र गीति – नाटय् है, जिसकी रचना सम्भवत: १९१२ ई. में हुई थी। यह खड़ीबोली का प्रथम गीतिनाटय् माना जाता है, जिसे इक्कीस मात्रा ओं के अरिल्ल छंद की अतुकान्त कविता में प्रस्तुत किया गया है। रचना सन्तोषजनक और सुखान्त है। हिंदी गीति–नाटय् प्रसाद कृत 'करूणालय' से आरम्भ होकर, पंत कृत 'ज्योत्स्ना' से होता हुआ, सियारामशरण गुप्त कृत 'उन्मुक्त' में प्रौढ़ता और दिनकर कृत 'ऊर्वशी' में चरमोत्कर्ष प्राप्त करता है।"१

3) **"प्रायश्चित" (1915 ई.)**

" 'प्रायश्चित' में देशद्रोही जयचन्द्र की आत्मग्लानी और आत्महनन की कहानी है। इसमें अतिप्राकृतिक तत्वो का प्रयोग कुछ कम है, और प्रथम बार जातीय आधार पर पात्रानुकूल भाषा का व्यवहार हुआ है। मुसलमान पात्र विशुध्द उर्दू बोलते हैं – "दरअसल खुदा–ए–पाक को जीनत देना मंजूर है, नहीं तो भला इन फौलादी देव जादे हिन्दुओं पर फतह पाना क्या मुमकिन था। हिन्दी कुछ स्थलों पर संस्कृत मिश्रित है, जैसे "हिन्दू साम्राज्य सूर्य इसी रणभूमि अस्ताचल में .....।"२ कुछ अशुध्द एवं आपत्तिजनक, विशिष्ट आंचलिक प्रयोग तथा 'हुजिए' और कुछ हास्यात्मक उक्तियाँ हैं – जैसे 'मंत्री महाशय'। रूपक में पात्रानुकूलता प्रशंसनीय है और केन्द्रीय समस्या का निष्कर्ष – अर्थात जामातृवध के लिए शत्रुवध और देशद्रोह के लिए आत्मवध – सर्वथा समीचीन है।"३

---

१. रामप्रसाद मिश्र – " प्रसाद : आलोचनात्मक सर्वेक्षण" – पृष्ठ क्र. १२४
२. प्रसाद – "चित्राधार" – पृष्ठ क्र. १०२
३. सूर्यप्रसाद दीक्षित – " प्रसाद का गदय" – पृष्ठ क्र. १४

4) राजश्री (1918 ई.)

'' 'राजश्री' में भी लेखक का ध्येय है ऐतिहासिक तथ्यान्वेषण। हर्षचरित्र और हयुनसांग के वर्णित वृत्तांत में यह कथा संकलित है। इसके दोनो संस्करण परस्पर भिन्न हैं। पहले में नान्दी, भारत – वाक्य व पदयात्मक – संवाद प्रयुक्त हैं। क्रमशः परिष्कार आता रहा है। दूसरे संस्करण में अंक – दृश्यो का नया विभाजन करके नाटककार ने नए पात्रों की अवतारणा भी की है। वस्तु – संगठन व चरित्र – चित्रण अपेक्षकृत नए संस्कारण में सुन्दर है। यह 'प्रसाद' का प्रथम सफल ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें उन्मुक्त कल्पना की उड़ान, कवित्व का संस्पर्श और अन्तश्चेतना का अंखण्ड़ प्रवाह है।''१

5) ''विशाख'' (1921 ई.)

'' 'विशाख' में बौध्दों के पतन का इतिहास है। चन्द्रलेखा के प्रति राजा नरदेव का कामुक व्यवहार, अत्याचार और प्रतिकार इसमे वर्णित है। प्ररम्भिक कृतियों की अपेक्षा इसमें परिपक्वता है, किन्तु इसका वस्तु–विन्यास कुछ भ्रामक और शिल्प शिथिल है। इस कथानक को दो अविच्छिन्न भागों में विभाजित कर दिया गया है। १) नायक–नायिका का विरह और २)प्रतिशोध।''२

६) ''अजातशत्रु'' (1922 ई.)

'' 'अजातशत्रु' प्रसाद के उन उत्कृष्ट नाटकों में गिना जाता है, जिनमें सबसे पहले प्राच्य–पाश्चात्य नाटय् कलाओं अथवा सुखांत – दुखांत भावनाओं का समन्वय किया गया है, तत्थ और कल्पना के समन्वय को अधिक संगत रूप प्रदान करने का यत्न किया गया है तथा परम्परागत नाटय् वर्जनाओं की अवहेलना करते हुए अग्नि – काण्ड इत्यादी के दृश्य दिखलाए गए हैं।'' ३

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – '' प्रसाद का गदय'' – पृष्ठ क्र. १४
२. वही पृष्ठ क्र. १४
३. रामप्रसाद मिश्र – '' प्रसाद : आलोचनात्मक सर्वेक्षण'' – पृष्ठ क्र. १६५

७) **" जनमेजय का नागयज्ञ" (1923 ई.) :–**

" 'जनमेजय का नागयज्ञ' पुराख्यान पर आधारीत पौराणिक नाटक है, जिसकी विषय वस्तू प्राचीन ग्रन्थों के मन्थन से प्राप्त हुई है। कल्पना का प्रयोग भी यत्रतत्र हुआ है। कथानक में आर्य जाति और नागों का संघर्ष वर्णित है। ब्राम्हण हत्या के प्रायश्चितस्वरूप पितृवध का प्रतिशोध लेने के संकल्प से सम्राट जनमेजय यजन करते है और नागों की आहुति देते हैं। अन्त में ऋषियों के प्रयत्न से शांति और संधि स्थापित होती है।"१

८) **"कामना" (1927 ई.) :–**

" 'कामना' 'प्रसाद' जी का प्रतीकवादी रूपक है। फूलों के द्वीप में तारा की सन्तानों द्वारा इस नाटक की रंगभूमि रची गई है। इसमें आदयन्त एक रोमांसपूर्ण और सकरूण वातावरण है। द्वीपवासी जब जीवन–संघर्ष, महत्वाकांक्षा और यांत्रिक युग की अन्य असत् प्रवृत्तियों से मुक्त थें, तभी स्वर्ण और मदिरा का सन्देशवाहक, पाश्चात्य सभ्यता का प्रतिनिधी, विदेशी युवक 'विलास' वहाँ प्रवेश करके उस पवित्र जाति को दिग्भ्रान्त एवं पतित करता है। रानी 'कामना' शासन की आकांक्षा से वशीभूत होकर सन्मार्ग से विचलित हो जाती है। अनाचार और अपराधों की बाढ़ आ जाती है, पर अनन्तर 'विवेक' के नेतृत्व में उनका बहिष्कार होता है।"२

९) **" स्कंदगुप्त" (1928 ई.)**

"प्रसाद का 'स्कंदगुप्त' सर्वश्रेष्ठ नाटक के रूप मे प्रतिष्ठित है। गुप्त साम्राज्य के पूनर्गठन की घटना ही इसका केन्द्रीय कार्य – व्यापार है। हुणों से पदाक्रान्त राष्ट्र का पुनरूध्दार एवं सुख–शांती की नयी व्यवस्था कराई गयी है। नाटय्कला की दृष्टी से यह कृति विशेष सफल है। वस्तु–संगठन वैज्ञानिक, चरित्र–चित्रण स्वाभाविक, कथोपकथन रोचक, वातावरण–प्रभावकारी और निष्कर्ष लोक संग्रहिक है।"३

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – " प्रसाद का गदय" – पृष्ठ क्र. १५
१. वही पृष्ठ क्र. १५
३. वही – पृष्ठ क्र. १९

१०) " चंद्रगुप्त" (1931 ई.)

" 'चन्द्रगुप्त' 'प्रसाद' जी का बृहत्तम नाटक है। इसका कथानक अति–विस्तृत है, जिसमें घटनाओं की भरमार है। अधिकांशत: ऐतिहासिक तथ्यों का समावेश है। यत्रतत्र कल्पना की अतिरंजना भी है। नंद वंश का विध्वंस, सिकन्दर का अभियान, सिल्यूकस पर विजय, कानौलिया से परिणय, मौर्यों का शासन और भारतीत राष्ट्रीयता के संगठन की समस्या इसमें केन्द्रस्थ है।"१

११) " ध्रुवस्वमिनी" (1934 ई.)

" 'ध्रुवस्वामिनी' 'प्रसाद' जी का अन्तिम पूर्ण नाटक है। इसकी रचना द्वारा लेखक ने हिंदी साहित्य में 'समस्या – नाटकों' का प्रवर्तन किया है। इसका वस्तु–विन्यास (विशाखकृत) – देवी चन्द्रगुप्तम् के आधार पर हुआ है। समुद्रगुप्त के आयोग्य उत्तराधिकारी रामगुप्त को शास्त्रमुख से 'क्लीव – का पुरूष' की उपाधि देकर लेखक ध्रुवदेवी को उसके पतित्व से मुक्त करता है। नारी–विवाह की चिरन्तन समस्या का व्यवहारिक समाधिक इस कृति में विदयमान है।"२

"एक घूँट" :–

" 'एक घूँट' सम्भवत: १९२९ ई. में लिखी गई प्रसाद की वह प्रसिध्द प्रतीकात्मक नाटय् कृति है, जिसे नगेन्द्र इत्यादी छायावादी आलोचक हिन्दी का प्रथम एकांकी बताते हैं, और जिनकी यह स्थापना सर्वथा विवादास्पद होते हुए भी, इसे ऐतिहासिक महत्व से सम्पन्न कर देती है।"३

निष्कर्ष :–

जयशंकर प्रसाद के अंतर्बाहय व्यक्तित्व तथा कृतित्व के विवेचन और विश्लेषण के पश्चात् जो निष्कर्ष प्राप्त हुए वे इस प्रकार हैं –

---

१. सूर्यप्रसाद दीक्षित – " प्रसाद का गदय" – पृष्ठ क्र. १९
२. वही – पृष्ठ क्र. १९
३. रामप्रसाद मिश्र – " प्रसाद : आलोचनात्मक सर्वेक्षण" – पृष्ठ क्र. १९९

हिंदी साहित्य के प्रख्यात साहित्यकार जयशंकर प्रसाद का जन्म संवत् १९४६ में काशी के माहेश्वर कूल में हुआ। प्रसाद के माता–पिता उनसे बहुत प्यार करते थें। प्रसाद का परिवार समृध्द होने के कारण उनकी शिक्षा घर पर ही हुई। प्रसाद ने बारह वर्ष की आयु में पिता को खोया और उसके तीन वर्ष पश्चात् माता को खोया। प्रसाद के बड़े भाई का भी देहांत हो जाता है। परिवार की सारी जिम्मेदारी प्रसाद पर पड़ती है। वैवाहिक जीवन में उनकी पहली पत्नी का देहांत हो जाता है। बाद में दुसरा विवाह करना पड़ता है लेकिन एक साल बाद उनकी दुसरी पत्नी का देहांत हो जाता है। प्रसाद तिसरा विवाह करते है जिससे एक पुत्र प्राप्ती हो जाती है।

प्रसाद जन्मजात कवि थें। प्रसाद ने साहित्य के क्षेत्र में नाटक, काव्य, उपन्यास, निबंध, कहानी क्षेत्र में अपना योगदान दिया है। प्रसाद ने कहानियों मे सामाजिक समस्याओं को चित्रित किया है। भारतीय संस्कृति और आदर्श को हमारे सामने रखा है। भारत की शिल्पकला को भी हमारे सामने रखा है। प्रेम का महत्व बताया हैं। प्रसाद की कहानियों में सफल प्रेम कम नजर आता है और असफल प्रेम ज्यादा नजर आता है। प्रसाद की कहानीयों में प्रकृति चित्रण, सौदर्य भी नजर आता है।

प्रसाद ने हिंदी साहित्य को अपनी अनमोल देन दी है। प्रसाद हिंदी साहित्य में अपना विशेष स्थान रखते है।